जीरे की खेती : मुख्य रोग एवं प्रबंधन

मंजु कुमारी, महेश कुमार पूनियाँ एवं शक्ति सिहं भाटी
कृषि महाविधालय, नगौर, कृषि विश्वविधालय, जोधपुर, राजस्थान
संवादी लेखक का ई–मेल : manjupawanda44@gmail.com

जीरा (क्युमिनम साइमिनम) एक मसाला रबी फसल है जो कम समय में पककर अधिक आमदनी देती है। मसालों के उत्पादन में जीरे का दुसरा प्रमुख स्थान है। जीरे के उत्पादन में भारत का विश्व में प्रथम व राजस्थान का देश मे दूसरा स्थान है। यह एक ऐसी फसल है जो सभी घरों की रसोई घर में पाई जाती है। एक मसाले एवं कई दवाइयों के रूप में इसका उपयोग किया जाता है, इसकी मांग पूरे देश भर में है तथा इसका निर्यात विदेशो में भी किया जाता है। देश कें विभिन्न जीरा उत्पन्न करने वाले क्षेत्रो के किसानों के लिये जीरे कि फसल अन्य फसलों की अपेक्षा ज्यादा लाभदायक है। इसकी फसल दोमट मिट्टी में अच्छी होती है तथा इसकी खेती सर्दी के मौसम (रबी) में की जाती है। जीरे की खेती अधिक तापमान में नहीं होती है।

जीरे की उन्नत किस्मे:

आरजेड–19: जीरे की यह किस्म 120–125 दिन में पककर तैयार हो जाती है। इससे 9–11 क्विंटल प्रति हैक्टेयर तक उत्पादन प्राप्त होता है। इस किस्म में उखटा, छाछिया व झुलसा रोग कम लगता है।

आरजेड– 209: यह भी किस्म 120–125 दिन में पककर तैयार हो जाती है। इसके दाने मोटे होते हैं। इस किस्म से 7–8 क्विंटल प्रति हैक्टेयर तक उपज प्राप्त होती है। इस किस्म में भी छाछिया व झुलसा रोग कम लगता है।

जीसी– 4: जीरे की ये किस्म 105–110 दिन में पककर तैयार हो जाती है। इसके बीज बड़े आकार के होते हैं। इससे 7–9 क्विंटल तक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। यह किस्म उखटा रोग के प्रति कम संवेदशील है।

आरजेड– 223: यह किस्म 110–115 दिन में पककर तैयार हो जाती है। जीरे की इस किस्म से 6–8 क्विंटल तक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। ये किस्म उखटा रोग के प्रतिरोधक है। इसमें बीज में तेल की मात्रा 3.25 प्रतिशत होती है।

उर्वरक (खाद):

जीरे के खेत में प्रति हेक्टेयर 8 से 10 टन गोबर खाद का उपयोग करें तथा इसको अंतिम जुताई से पहले खेत में मिला देंवें। जीरे की फसल के लिए 28 किलो ग्राम नाइट्रोजन व 21 किलो ग्राम फास्फोरस प्रति हेक्टेयर का प्रयोग करे। फास्फोरस की पूरी मात्रा अंतिम बुवाई के समय भूमि में मिला देना चाहिए एवं नाइट्रोजन की आधी मात्रा बुवाई के 32 से 35 दिन बाद एवं आधी शेष 15 किलो ग्राम नाइट्रोजन बुवाई के 55 दिन बाद सिचाई के साथ देवें।

बीज दर एवं बुवाई का समय:

जीरा की बीज दर 12 किलो ग्राम प्रति हेक्टेयर होता है तथा इसकी बुवाई 1 से 1.5 सेमी. की गहराई तक ही करें। इससे ज्यादा की गहराई पर बोने से बीज का अंकुरण कम होता है। इसकी बुवाई के समय तापमान 24 से 28 डिग्री सेल्सीयस तथा पौधों की वृद्धि के समय 20 से 22 डिग्री सेल्सीयस होना चाहिए। बुवाई नवम्बर के तीसरे सप्ताह से दिसम्बर के पहले सप्ताह तक हो जाना चाहिए। सामन्य तौर पर बीज की बुवाई छिटककर की जाती है लेकिन अगर सीधी विधि से करें तो ज्यादा अच्छा रहता है । इससे खरपतवार निकासी में अच्छा रहता है। जीरे का प्रति एकड़ उत्पादन 6 से 7 किवंटल होता है लेकिन जीरे की खेती में सही तरीके से मौसम, बीज, खाद, सिंचाई तथा रोग एवं कीटों की जानकारी नहीं रहने पर नुकसान भी उठाना पड़ता है। प्रति वर्ष जीरे में रोगों के प्रकोप से बहुत हानि होती है। यदि फसल की बुवाई से बीजोपचार, भुमि उपचार तथा फसल उगने के बाद इन रोगों के लक्षणों कि पहचान कर रोकथाम की जाये तो किसानों को जीरे का भरपूर उत्पादन प्राप्त हो सकता है। यह फसल अत्यधिक संवेदनशीलता होने के कारण उगने के बाद एक महीने से लेकर

पकने कि अवधि तक विभिन्न प्रकार के रोगों से बहुत ज्यादा ग्रसित हो जाती हैं जिसकी वजह से इस पर आधारित पश्चिमी राजस्थान का एक लोकगीत भी गाया जाता है जीरो जीव रो बैरी रे.....जीरे की संवेदनशीलता के कारण यह फसल रोग से जल्दी प्रभावित होती है और खराब होकर किसान के सारे अरमानों को धो डालती है। इसी कारण खासतौर से पश्चिमी राजस्थान के लोकगीतों में भी इसे जीरो जीव रो बैरी रे... कहा गया है, लेकिन, आज के माहौल में यह कैश क्रॉप है।

जीरे की फसल में प्रमुख रोग

उखटा (विल्ट): यह रोग कवक (फ्यूजेरियम आक्सीस्पोरम कुमीनाइ) द्वारा होता है जो मिट्टी व बीज जनित है। इस रोग का प्रकोप पौधों की किसी भी अवस्था में हो सकता है परन्तु युवावस्था में ज्यादा होता है। जीरे में होने वाले रोगों में यह ज्यादा हानिकारक होता हैं क्योंकि इसके भयंकर प्रकोप से पूरी फसल नष्ट होती है। पहले वर्ष यह बीमारी कहीं कहीं पर खेत में आती है फिर प्रतिवर्ष बढ़ती रहती है और तीन वर्ष बाद उस क्षेत्र में जीरा की फसल लेना असम्भव हो जाता है।

लक्षण: यह बीमारी भूमि एंव बीज के साथ आती है। रोग के सर्वप्रथम लक्षण उगने वाले बीज पर आते हैं तथा पौधा भूमि से निकलने के पहले ही मर जाता है तथा बाद में हरा–भरा पौधा ऊपर से झुक जाता है। कुछ दिनों में सूख कर नष्ट हो जाता है। रोगग्रस्त पौधे की जड़ के अंदर रोग कारक कवक के संक्रमण से संवाहक उत्तकों का रंग भूरा पड़ जाता है। इससे पौधा मृदा से जल एवं पोषक तत्व नहीं ले पाता। रोग का प्रकोप फूल आने के बाद होता है तो कुछ बीज बन जाते है। ऐसे रोगग्रसित बीज हल्के, आकार में छोटे, पिचके हुए तथा उगने की क्षमता कम रखते है। रोगी पौधे कद में छोटे तथा दूर से पत्तियों पीली नजर आती हैं।

रोकथाम: एक ही खेत मै बार– बार जीरे कि फसल ना लेवें व रोगग्रसित खेत में जीरा न बोयें। स्वस्थ बीज को ही बोयें। ग्रीष्म कालीन गहरी जुताई करनी चाहिए। बीजों को कार्बेण्डाजिम 50 डब्ल्यू.पी. से 2 ग्राम प्रति किलो बीज से उपचारित कर बुवाई करें। कम से कम तीन वर्ष का फसल चक्र (ग्वार–जीरा–ग्वार– गेहू–ग्वार–सरसों) अपनायें। बुवाई पूर्व सरसों का भूसा, नीम की खलिया फलगटी जमीन में मिलाने से रोग में कमी आती है। ट्राइकोडर्मा विरिडी/हर्जियनम मित्र फफूंद 2.5 किलो प्रति हेक्टेयर100 किलो सड़ी हुयी गोबर खाद में मिलाकर बुवाई के 15 दिन पूर्व भूमि में देने से रोग में कमी होती है। इसके अलावा खेत के जिस क्षेत्र में जीरे के पौध में रोग के लक्षण दिखाई दे, उन क्यारियों में कारबेंडेजिम दवा 0.1 प्रतिशत की दर से घोल बनाकर पौधों की जड़ों के पास देनी चाहिए। साथ ही आधा किलोग्राम दवा प्रति हैक्टेयर की दर से खेत में भुरकाव कर सिंचाई करें। रोगरोधी किस्म जीसी–4 बोये।

झुलसा (ब्लाईट): यह रोगकवक (आल्टरनेरिया बुर्न्सी) से होता है जो जीरे की फसल का मुख्य रोग है। यह फसल में फूल आने शुरू होने के बाद व फल बनने के समय आकाश में बादल छाए रहें तो इस रोग का लगना निश्चित हो जाता है इसलिए सुरक्षात्मक उपाय पहले ही कर लेने चाहिए। फूल आने के बाद से लेकर फसल पकने तक यह रोग कमी भी हो सकता है। मौसम अनुकूल होने पर यह रोग बहुत तेजी से फैलता है।

लक्षणः रोग के सर्वप्रथम लक्षण पौधे की पत्तियों पर भूरे रंग के धब्बों के रूप में दिखाई देते है। धीरे–धीरे ये काले रंग में बदल जाते है। पत्तियों से वृत, तने एवं बीज पर इसका प्रकोप बढ़ता है। पौधों के सिरे झुके हुए नजर आते है। संक्रमण के बाद यदि आर्द्रता लगातार बनी रहें या वर्षा हो जाये तो रोग उग्र हो जाता है। रोग की उग्र अवस्था में पूरा पौधा सूखकर काला पड़ जाएगा। इसे कालिया रोग भी कहते हैं। यह रोग इतनी तेजी से फैलता है कि रोग के लक्षण दिखाई देते ही यदि नियंत्रण कार्य न कराया जाये तो फसल को नुकसान से बचाना मुश्किल होता है।

रोकथामः स्वस्थ बीजों को बोने के काम में लीजिए। फसल में अधिक सिंचाई नही करें। खेत में पानी भरा हुआ नहीं होना चहिए । प्रारंभिक रोग ग्रसित पौधों को खेत से उखाड़कर जला देवें। फूल आते समय लगभग 30–35 दिन की फसल अवस्था पर डाइफैनाक्वोनाजोल (सर्वांग कवकनाशी) आधा ग्राम प्रतिलीटर या मंकोजेब 0.2 प्रतिशत के घोल का छिड़काव करें आवश्यकतानुसार 10 से 15 दिन बाद दोहरायें। जैविक जीरा की खेती में इस रोग के नियंत्रण के लिए पंचामृत घोल का 0.5 प्रतिशत से छिड़काव करें।

छाछिया (पाउडरी मिल्डयू)ः यह रोग कवक (इरीसाईफी पोलीगोनी) से होता है।

लक्षणः इस रोग के लक्षण सर्वप्रथम पत्तियों पर सफेद चूर्ण के रूप में नजर आते है। धीरे–धीरे पौधे के तने एवं बीज पर रोग फेल जाता है एवं पूरा पौधा दूर से ही सफेद दिखाई पड़ता है। रोग बढने पर पौधा गंदला व कमजोर हो जाता है। रोग का प्रकोप जल्दी हो जाता है तो बीज नहीं बनते है। और देर से हो तो बीज बहुत छोटे एवं अध पके रह जाते हैं।

रोकथामः फसल में अगर छाछया रोग के लक्षण दिखाई दें तो उन खेतों में कैराथैन एक मिलीलीटर एक लीटर पानी में घोलकर या घुलनशील गंधक 25 किलो प्रतिहै/टेयर की दर से भुरकाव करें। आवश्यकतानुसार 10 से 15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव या भुरकाव दोहरावें। जैविक जीरा में इस रोग के नियंत्रण के लिए फसल पर गौमूत्र (10 प्रतिशत) व एनएसकेइ (2.5 प्रतिशत) व लहसुन अर्क (2.0 प्रतिशत) घोल का छिड़काव करें। अतिसंवेदनशील मानी जाने वाली जीरे की फसल को बादलों वाले मौसम में रोग लगने का खतरा रहता है। कोई भी लक्षण दिखने से पहले ही जीरे की फसल में उपाय शुरू कर देने चाहिए। इससे रोग की अवस्था आने से पहले ही इसका उपचार हो जाएगा। बादलों के कारण सबसे खतरनाक माना जाने वाला झुलसा रोग लग सकता है। इससे पूरी फसल काली पड़कर खराब हो सकती है। इन दिनों फसल में फूल बनने से लेकर दाना बनने की स्थिति बन रही है, इसी दौरान रोग का खतरा रहता है।

जिस देश को अपनी भाषा और साहित्य
के गौरव का अनुभव नहीं है,
वह उन्नत नहीं हो सकता।
–डॉ. राजेन्द्र प्रसाद